# अध्याय 13: क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभाग योग

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.01**

> अर्जुन उवाच
>
> प्रकृतिं पुरुषं चैव क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च |
>
> एतद्वेदितुमिच्छामि ज्ञानं ज्ञेयं च केशव || **1** ||

हिन्दी अनुवाद:
अर्जुन बोले—हे केशव! मैं प्रकृति और पुरुष को तथा क्षेत्र (शरीर) और क्षेत्रज्ञ (आत्मा) को, और इसके साथ ही ज्ञान तथा जानने योग्य तत्व (ज्ञेय) को भी तत्व से जानना चाहता हूँ।

सरल व्याख्या:
अर्जुन यहाँ जीवन के सबसे बड़े रहस्य को समझने के लिए प्रश्न कर रहे हैं। वे पूछ रहे हैं कि यह जो बाहर दिखने वाला संसार और हमारा शरीर है, वह क्या है? इसके भीतर जो चेतना बैठी है, वह क्या है? असली ज्ञान किसे कहते हैं और उस ज्ञान को पाकर जानने योग्य परम सत्य क्या है?

> यह श्लोक हमें बताता है कि... आत्मिक मार्ग पर बढ़ने के लिए दृश्य जगत और अदृश्य चेतना के अंतर को जानने की तीव्र जिज्ञासा होना ही पहली सीढ़ी है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.02**

> श्रीभगवानुवाच
>
> इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते |
>
> एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः || **2** ||

हिन्दी अनुवाद:
श्रीभगवान बोले—हे कुन्तीपुत्र! यह शरीर 'क्षेत्र' (खेती या मैदान) इस नाम से कहा जाता है और इसको जो जानता है, उसको तत्ववेत्ता महापुरुष 'क्षेत्रज्ञ' (जानने वाला) ऐसा कहते हैं।

सरल व्याख्या:
भगवान उत्तर देते हैं कि हमारा यह जो भौतिक शरीर है, यह एक खेत की तरह है। जैसे खेत में हम जैसा बीज बोते हैं, वैसी ही फसल काटते हैं; वैसे ही इस शरीर से हम जैसे कर्म करते हैं, वैसा ही परिणाम भोगते हैं। और इस शरीर के भीतर जो 'मैं' बैठा है, जो यह जानता है कि "यह मेरा शरीर है, यह मेरी आँखें हैं, यह मेरा हाथ है"—वह जानने वाली चेतना ही आत्मा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... शरीर केवल एक साधन या माध्यम है, जबकि हमारे भीतर का वास्तविक अस्तित्व वह दृष्टा (जानने वाला) है जो इस शरीर को देख रहा है।

श्लोक संख्या: **13.03**

> क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत |
>
> क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम || **3** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे भरतवंशी अर्जुन! तू संपूर्ण क्षेत्रों (शरीरों) में क्षेत्रज्ञ (जानने वाला) भी मुझे ही जान और क्षेत्र तथा क्षेत्रज्ञ का जो तत्व से जानना है, वही मेरे मत में वास्तविक ज्ञान है।

सरल व्याख्या:
भगवान यहाँ एक बहुत गहरी बात समझाते हैं। वे कहते हैं कि केवल तुम्हारे शरीर में ही नहीं, बल्कि संसार के हर जीव के शरीर के भीतर जो जानने वाली चेतना बैठी है, वह वास्तव में मेरा ही स्वरूप है। जो मनुष्य इस बात को समझ लेता है कि शरीर क्या है और उसके भीतर की अविनाशी सत्ता क्या है, उसी की समझ को मैं असली और सच्चा ज्ञान मानता हूँ। बाकी सब तो केवल सांसारिक कलाएँ हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... संसार के सभी शरीरों में एक ही अविनाशी परमात्मा चेतना के रूप में निवास कर रहा है, और इस अभेद को पहचानना ही सर्वोच्च ज्ञान है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.04**

> तत्क्षेत्रं यच्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च यत् |
>
> स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु || **4** ||

हिन्दी अनुवाद:
वह क्षेत्र (शरीर) क्या है, कैसा है, किन विकारों वाला है, किस कारण से कौन सा कार्य उत्पन्न हुआ है तथा वह क्षेत्रज्ञ भी जो है और जिस प्रभाव वाला है—वह सब तू संक्षेप में मुझसे सुन।

सरल व्याख्या:
भगवान अर्जुन से कहते हैं कि अब मैं तुम्हें गहराई से समझाऊँगा कि यह शरीर किन तत्वों से मिलकर बना है, इसमें सुख-दुःख और काम-क्रोध जैसे बदलाव (विकार) कैसे आते हैं, यह कहाँ से पैदा होता है और इसके भीतर बैठी आत्मा की दिव्य शक्तियाँ क्या हैं। तुम इस पूरे विज्ञान को बहुत संक्षेप में और सरल तरीके से मुझसे सुनो।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सत्य को जानने के लिए केवल ऊपर-ऊपर की बातें पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि शरीर की बनावट और आत्मा के प्रभाव को गहराई से विश्लेषित करना आवश्यक है।

श्लोक संख्या: **13.05**

> ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक् |
>
> ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः || **5** ||

हिन्दी अनुवाद:
यह क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का तत्व ऋषियों द्वारा बहुत प्रकार से कहा गया है और विविध वेदमन्त्रों द्वारा भी अलग-अलग स्पष्ट किया गया है तथा भली-भाँति निश्चय किए हुए, युक्तिपूर्ण ब्रह्मसूत्र के पदों द्वारा भी कहा गया है।

सरल व्याख्या:
भगवान कहते हैं कि यह जो शरीर और आत्मा की बात मैं तुम्हें बता रहा हूँ, यह कोई नई बात नहीं है। अनादि काल से बड़े-बड़े संतों, विचारकों और प्राचीन ग्रंथों ने अपने-अपने अनुभवों से, बहुत सुंदर तर्कों और उदाहरणों के माध्यम से इसी एक परम सत्य को बार-बार प्रमाणित किया है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... आत्म-ज्ञान का मार्ग सनातन और प्रामाणिक है, जिसे हर काल के महापुरुषों और श्रेष्ठ विचारों ने सर्वसम्मति से स्वीकार किया है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.06-07**

> महाभूतान्यहङ्कारो बुद्धिरव्यक्तमेव च |
>
> इन्द्रियाणि दशकं चैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः || 6 ||
>
> इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः |
>
> एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम् || 7 ||

हिन्दी अनुवाद:

पाँच महाभूत (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश), अहंकार, बुद्धि और मूल अव्यक्त (प्रकृति); दस इन्द्रियाँ (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ), एक मन और पाँच इन्द्रियों के विषय (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध); तथा इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख, स्थूल शरीर का पिंड (संघात), चेतना (प्राण-शक्ति) और धैर्य—इस प्रकार यह क्षेत्र विकारों सहित संक्षेप में कहा गया है।

सरल व्याख्या:

यहाँ भगवान शरीर की पूरी बनावट (मशीनरी) को खोलकर रख देते हैं। वे कहते हैं कि जिन २४ तत्वों से यह 'क्षेत्र' बना है, वे हैं—पाँच तत्व जिनसे हमारा भौतिक शरीर बना है, हमारी सोच (बुद्धि), मैं-पन का भाव (अहंकार), हमारी दसों इन्द्रियाँ, हमारा चंचल मन, और जिन चीजों को इन्द्रियाँ भोगती हैं। इसके अलावा हमारे मन में उठने वाले भाव जैसे—किसी चीज को पाने की चाह (इच्छा), नफरत (द्वेष), सुख-दुःख का अहसास, हाड़-मांस का यह ढांचा, नस-नस में दौड़ती प्राण-शक्ति और किसी चीज को सहने की ताकत (धैर्य)—यह सब का सब 'शरीर' (क्षेत्र) का ही हिस्सा है, आत्मा का नहीं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... हमारे मानसिक विचार, भावनाएं और यहाँ तक कि सुख-दुःख भी केवल प्रकृति और शरीर के ही खेल हैं; आत्मा इन सबसे अलग और परे है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.08**

> अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् |
>
> आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः || 8 ||

हिन्दी अनुवाद:

श्रेष्ठता के अभिमान का अभाव (अमानित्व), दम्भ (दिखावे) का न होना, किसी भी प्राणी को कष्ट न देना (अहिंसा), क्षमाभाव, मन और वाणी की सरलता, गुरु की सेवा, बाहर-भीतर की शुद्धि, अंतःकरण की स्थिरता और मन-इन्द्रियों का नियंत्रण...

सरल व्याख्या:

यहाँ से भगवान उन गुणों की सूची देना शुरू करते हैं जिन्हें वे 'ज्ञान' कहते हैं। सच्चा ज्ञान वह नहीं है जो केवल किताबों में हो, बल्कि वह हमारे स्वभाव में दिखना चाहिए। जिसके भीतर ज्ञान आता है, वह अपने सम्मान की इच्छा छोड़ देता है, दिखावा नहीं करता, मन-वचन-कर्म से किसी को चोट नहीं पहुँचाता, दूसरों को माफ कर देता है, व्यवहार में सीधा और सच्चा होता है, सच्चे मार्गदर्शक (गुरु) का आदर करता है, अपने शरीर और विचारों को साफ रखता है, अपने लक्ष्य पर टिका रहता है और अपनी इच्छाओं को काबू में रखता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... वास्तविक ज्ञान का अर्थ कोई बौद्धिक चातुर्य नहीं, बल्कि हमारे चरित्र की परम पवित्रता, विनम्रता और इन्द्रिय-संयम है।

Satyaanubhuti Ashram

**श्लोक संख्या: 13.09**

> इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार एव च |
>
> जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् || 9 ||

**हिन्दी अनुवाद:**
इन्द्रियों के भोगों में आसक्ति का न होना, अहंकार का अभाव तथा जन्म, मृत्यु, वृद्धावस्था और रोगों में दुःख रूप दोषों का बार-बार विचार करना...

**सरल व्याख्या:**
ज्ञानी व्यक्ति वह है जो इन्द्रियों के सुखों (जैसे स्वाद, रूप) के पीछे दीवाना नहीं होता। वह जानता है कि यह शरीर नश्वर है, इसलिए वह घमंड नहीं करता। वह जीवन की सच्चाई से आँखें नहीं चुराता, बल्कि इस बात को हमेशा याद रखता है कि इस संसार में जन्म लेना, बीमार होना, बूढ़ा होना और मरना—इन सबमें गहरा दुःख छिपा है। जब मनुष्य इस सच्चाई को याद रखता है, तो वह संसार के झूठे मोह में नहीं फंसता।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... संसार की नश्वरता और शारीरिक दुःखों के कड़वे सच को निरंतर याद रखना ही वैराग्य और आत्म-जागृति का कारण बनता है।

Satyaanubhuti Ashram

**श्लोक संख्या: 13.10**

> असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु |
>
> नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु || 10 ||

**हिन्दी अनुवाद:**
पुत्र, स्त्री, घर और धन आदि में आसक्ति का न होना और ममता का न होना तथा प्रिय और अप्रिय की प्राप्ति में सदा ही चित्त का सम रहना...

**सरल व्याख्या:**
भगवान कहते हैं कि अपने परिवार, बच्चों और घर-बार से प्रेम करना तो ठीक है, लेकिन उनमें इस कदर डूब जाना कि उनके बिना जीवन ही न लगे (आसक्ति), वह अज्ञान है। ज्ञानी व्यक्ति अपने कर्तव्यों को पूरी निष्ठा से निभाता है, पर मन से मुक्त रहता है। जब उसके जीवन में कुछ अच्छा होता है (प्रिय), तो वह हवा में नहीं उड़ता, और जब कुछ बुरा होता है (अप्रिय), तो वह अवसाद में नहीं डूबता। उसका मन हर हाल में एक जैसा शांत रहता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... पारिवारिक और सांसारिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए भी भीतर से निर्लिप्त रहना और जीवन के थपेड़ों में शांत बने रहना ही सच्चे ज्ञान का व्यावहारिक रूप है।

श्लोक संख्या: **13.11**

> मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणि |
>
> विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि || **11** ||

हिन्दी अनुवाद:

मुझ परमेश्वर में अनन्य योग के द्वारा अव्यभिचारिणी (अडिग) भक्ति, एकांत और पवित्र स्थान में रहने का स्वभाव तथा विषयासक्त मनुष्यों के समुदाय में प्रेम का न होना...

सरल व्याख्या:

ज्ञान का अगला लक्षण है ईश्वर के प्रति अटूट और अविचल प्रेम। ज्ञानी व्यक्ति का मन भगवान से इस तरह जुड़ जाता है कि वह संसार की चकाचौंध से दूर, शांत और पवित्र स्थानों में बैठना पसंद करता है। उसे व्यर्थ की गपशप करने वाले, भोग-विलास में डूबे लोगों की भीड़ में बैठना अच्छा नहीं लगता, बल्कि वह अंतर्मुखी होकर रहने में आनंद पाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा में अनन्य निष्ठा होना और चंचल भीड़-भाड़ से बचकर एकांत में आत्म-चिंतन करना ही अंतःकरण को जागृत करने का साधन है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.12**

> अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्वज्ञानार्थदर्शनम् |
>
> एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा || **12** ||

हिन्दी अनुवाद:

अध्यात्म ज्ञान में निरंतर स्थिति और तत्वज्ञान के अर्थ रूप परमात्मा को सर्वत्र देखना—यह सब तो 'ज्ञान' है और जो इसके विपरीत है, वह 'अज्ञान' है।

सरल व्याख्या:

भगवान यहाँ ज्ञान की परिभाषा को समेटते हुए कहते हैं कि खुद को आत्मा जानना और हमेशा इसी भाव में जीना कि "मैं यह नश्वर शरीर नहीं हूँ" (अध्यात्म ज्ञान), तथा इस ज्ञान के फल स्वरूप हर जीव में और हर परिस्थिति में केवल उस परम सत्य (परमात्मा) को ही देखना—यही वास्तविक ज्ञान है। इसके अलावा जो कुछ भी है—जैसे अहंकार, दिखावा, ईर्ष्या और केवल दुनियावी समझ—वह सब अज्ञान की श्रेणी में आता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... आत्मा और परमात्मा के शाश्वत संबंध को पहचानना ही एकमात्र सच्चा ज्ञान है, इसके विपरीत केवल भौतिकता में उलझे रहना अज्ञान का अंधकार है।

श्लोक संख्या: **13.13**

> ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामी यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते |
>
> अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते || **13** ||

हिन्दी अनुवाद:
जो जानने योग्य है (ज्ञेय) और जिसे जानकर मनुष्य अमृत (परम आनंद या मोक्ष) को प्राप्त होता है, उसको अब मैं भली-भाँति कहूँगा। वह अनादि वाला परम ब्रह्म है, उसे न 'सत्' (अस्तित्व वाला) कहा जा सकता है और न 'असत्' (अस्तित्वहीन)।

सरल व्याख्या:
भगवान कहते हैं कि अभी तक मैंने तुम्हें 'ज्ञान' (ज्ञान के लक्षण) के बारे में बताया, अब मैं तुम्हें उस परम सत्य के बारे में बताता हूँ जिसे 'जाना जाना चाहिए' (ज्ञेय)। वह परमात्मा अनादि है, यानी उसकी शुरुआत कब हुई, कोई नहीं जानता। वह इतना असीम है कि उसे न तो हम इस संसार की किसी वस्तु की तरह कह सकते हैं कि "वह यह है" (सत्), और न ही यह कह सकते हैं कि "वह नहीं है" (असत्)। वह इन दोनों ही सीमाओं से परे है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा ही हमारे जीवन का एकमात्र अंतिम लक्ष्य और जानने योग्य परम सत्य है, जिसे अनुभव करते ही मनुष्य जन्म-मरण के भय से मुक्त हो जाता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.14**

> सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् |
>
> सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति || **14** ||

हिन्दी अनुवाद:
वह सब ओर हाथ-पैर वाला, सब ओर आँख, सिर और मुख वाला तथा सब ओर कान वाला है, क्योंकि वह संसार में सबको व्याप्त करके (ढककर) स्थित है।

सरल व्याख्या:
उस परमात्मा का कोई एक सीमित आकार नहीं है। ब्रह्मांड में जितने भी हाथ-पैर काम कर रहे हैं, वे सब उसी की शक्ति से चल रहे हैं। जितनी भी आँखें देख रही हैं, जितने मुख बोल रहे हैं और जितने कान सुन रहे हैं, वे सब वास्तव में उसी अनंत चेतना के अंग हैं। वह हवा की तरह संसार के कण-कण में समाया हुआ है और सब कुछ उसके भीतर ही चल रहा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... ईश्वर किसी एक कोने में नहीं बैठा है, बल्कि वह सर्वव्यापी है और संसार की हर क्रिया में उसकी अदृश्य उपस्थिति काम कर रही है।

श्लोक संख्या: **13.15**

> सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् |
>
> आसक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च || **15** ||

हिन्दी अनुवाद:
वह संपूर्ण इन्द्रियों के विषयों को जानने वाला है, परंतु वास्तव में सब इन्द्रियों से रहित है; वह आसक्ति रहित होने पर भी सबका पालन-पोषण करने वाला है और गुणों से अतीत (निर्गुण) होने पर भी गुणों को भोगने वाला है।

सरल व्याख्या:
परमात्मा के पास हमारे जैसी हाड़-मांस की इन्द्रियाँ (आँख, कान) नहीं हैं, फिर भी वह सब कुछ देखता और सुनता है। वह किसी भी सांसारिक वस्तु से बंधा हुआ नहीं है (अनासक्त), फिर भी वही पूरी सृष्टि का पेट भरता है। वह स्वयं सत, रज और तम—इन तीनों गुणों से ऊपर है (निर्गुण), लेकिन जब वह संसार के रूप में प्रकट होता है, तो इन सभी गुणों का आधार वही बनता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमेश्वर की शक्ति अद्भुत और विरोधाभासों से भरी है; वह भौतिक सीमाओं से पूरी तरह मुक्त रहकर भी संपूर्ण ब्रह्मांड का संचालन करता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.16**

> बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च |
>
> सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् || **16** ||

हिन्दी अनुवाद:
वह संपूर्ण चराचर प्राणियों के बाहर और भीतर भी परिपूर्ण है और चर (चलने वाले) तथा अचर (न चलने वाले) भी वही है। वह सूक्ष्म होने के कारण जानने में नहीं आता (अविज्ञेय है) तथा वह बहुत दूर भी स्थित है और अत्यंत पास भी वही है।

सरल व्याख्या:
वह ईश्वर हमारे शरीर के बाहर भी है और आत्मा के रूप में भीतर भी। जो चीजें हिलती-डुलती हैं (जैसे इंसान, पशु) और जो स्थिर हैं (जैसे पहाड़, पेड़), उन सब में वही है। वह इतना महीन और सूक्ष्म है कि उसे इन आँखों से या केवल बुद्धि से नहीं पकड़ा जा सकता। अज्ञानी मनुष्य के लिए जो उसे बाहर ढूंढ रहा है, वह बहुत दूर है; लेकिन जो अपने भीतर झांकता है, उसके लिए वह दिल की धड़कन से भी ज्यादा पास है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा अपनी अत्यंत सूक्ष्म प्रकृति के कारण साधारण बुद्धि की पकड़ में नहीं आता, फिर भी वह हर जड़ और चेतन में पूरी तरह व्याप्त है।

श्लोक संख्या: **13.17**

> अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् |
>
> भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च || **17** ||

हिन्दी अनुवाद:
वह परमात्मा संपूर्ण भूतों में विभाग रहित (एक रस) स्थित होने पर भी अलग-अलग की तरह दिखाई देता है तथा वही जानने योग्य परमात्मा सब जीवों को उत्पन्न करने वाला, पालन करने वाला और संहार करने वाला है।

सरल व्याख्या:
जैसे आकाश एक ही है, लेकिन अलग-अलग कमरों या बर्तनों के कारण वह अलग-अलग दिखाई देता है; वैसे ही परमात्मा एक ही अखण्ड सत्ता है, जो सभी अलग-अलग शरीरों में अलग-अलग जीव की तरह दिखाई देता है। वही परम सत्य समय आने पर सब चीजों को अपने भीतर समेट लेता है (प्रलय), सबका पालन करता है और फिर से नई सृष्टि को जन्म देता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... संसार की अनेकता के पीछे वास्तव में एक ही अभिन्न और अविनाशी परमात्मा की शक्ति काम कर रही है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.18**

> ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते |
>
> ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम् || **18** ||

हिन्दी अनुवाद:
वह सूर्यों का भी सूर्य (प्रकाशन का भी प्रकाशक) है और अज्ञान रूपी अंधकार से अत्यंत परे कहा जाता है। वह स्वयं ज्ञान स्वरूप है, जानने योग्य है और ज्ञान के द्वारा प्राप्त होने वाला है तथा सबके हृदय में विशेष रूप से स्थित है।

सरल व्याख्या:
सूरज, चाँद या आग में जो रोशनी है, वह भी उसी परमात्मा के प्रकाश का एक छोटा सा हिस्सा है। वह अज्ञान के किसी भी अंधकार से कभी नहीं छूआ जा सकता। वह स्वयं ही वह ज्ञान है जिसे पाने की हम कोशिश कर रहे हैं, वही हमारा लक्ष्य है, और जो गुण ऊपर (श्लोक ८ से १२ तक) बताए गए हैं, उनके जरिए ही उसे पाया जा सकता है। वह कहीं बाहर नहीं, हम सबके हृदय के ठीक बीच में बैठा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा परम प्रकाश का पुंज है जो हर मनुष्य के अंतःकरण में साक्षी रूप में निवास कर रहा है, और उसे केवल शुद्ध आचरण से ही अनुभव किया जा सकता है।

श्लोक संख्या: **13.19**

> इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समास्तः |
>
> मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते || **19** ||

हिन्दी अनुवाद:
इस प्रकार क्षेत्र (शरीर), ज्ञान और ज्ञेय (जानने योग्य परमात्मा) का स्वरूप संक्षेप में कहा गया है। मेरा भक्त इस सब तत्व को जानकर मेरे ही स्वरूप (मद्भाव) को प्राप्त हो जाता है।

सरल व्याख्या:
भगवान यहाँ इस विषय का उपसंहार करते हुए कहते हैं कि मैंने तुम्हें संक्षेप में तीनों बातें स्पष्ट कर दी हैं: यह शरीर क्या है (क्षेत्र), इसे बदलने वाले दिव्य गुण कौन से हैं (ज्ञान) और वह परम सत्य कौन है जिसे पाना है (ज्ञेय)। जो भक्त इस रहस्य को केवल बौद्धिक रूप से नहीं, बल्कि अपने अनुभव में उतार लेता है, वह अंततः मेरे ही दिव्य और आनंदमय स्वरूप में लीन हो जाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... शरीर, साधना और साध्य (ईश्वर) के इस त्रिकोण को समझ लेना ही भक्त को सीधे ईश्वरीय चेतना में विलीन कर देता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.20**

> प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि |
>
> विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसम्भवान् || **20** ||

हिन्दी अनुवाद:
तू प्रकृति (जड़) और पुरुष (चेतन) इन दोनों को ही अनादि जान और काम-क्रोध आदि विकारों को तथा सत-रज-तम आदि तीनों गुणों को भी प्रकृति से ही उत्पन्न जान।

सरल व्याख्या:
अब भगवान सृष्टि के चलने के नियम को समझाते हैं। वे कहते हैं कि इस संसार में दो चीजें मुख्य हैं—एक 'प्रकृति' (जो जड़ है, जैसे हमारा शरीर और दृश्य जगत) और दूसरा 'पुरुष' (जो चेतन आत्मा है)। ये दोनों ही अनादि हैं, यानी इनकी कोई शुरुआत नहीं है। हमारे मन में उठने वाले जितने भी विकार हैं—जैसे गुस्सा, इच्छा, सुख-दुःख—और जो भी स्वभाव के गुण हैं, वे सब इस जड़ प्रकृति के खेल हैं, आत्मा के नहीं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... शरीर और संसार के सारे बदलाव प्रकृति की देन हैं; आत्मा इन सभी विकारों और गुणों से पूरी तरह अछूती और सनातन है।

श्लोक संख्या: **13.21**

> कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते |
>
> पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते || **21** ||

हिन्दी अनुवाद:
कार्य (स्थूल शरीर) और करण (इन्द्रियाँ तथा मन) को उत्पन्न करने में 'प्रकृति' कारण कही जाती है और जीवात्मा (पुरुष) सुख-दुःखों के भोगने में कारण कहा जाता है।

सरल व्याख्या:
भगवान समझाते हैं कि हमारे इस पाँच तत्वों के शरीर को गढ़ना, इन्द्रियों को बनाना और मन-बुद्धि की मशीनरी को तैयार करना—यह सब 'प्रकृति' का काम है। लेकिन उस शरीर के भीतर बैठकर जो चेतना उन इंद्रियों के माध्यम से मिलने वाले सुख और दुःख का अहसास करती है, वह 'पुरुष' यानी जीवात्मा है। प्रकृति साधन बनाती है और आत्मा उसमें बैठकर भोग करती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... हमारे शरीर की क्रियाएँ और परिस्थितियाँ प्रकृति के नियमों से चलती हैं, परंतु उन परिस्थितियों में सुखी या दुःखी होना जीव की अपनी चेतना पर निर्भर करता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.22**

> पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान्व |
>
> कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु || **22** ||

हिन्दी अनुवाद:
प्रकृति में स्थित हुआ ही यह पुरुष (जीवात्मा) प्रकृति से उत्पन्न हुए तीनों गुणों (सत, रज, तम) को भोगता है और इन गुणों का संग (आसक्ति) ही इस जीवात्मा के अच्छी-बुरी योनियों में जन्म लेने का कारण है।

सरल व्याख्या:
जब आत्मा इस जड़ शरीर (प्रकृति) में आकर बैठती है, तो वह खुद को शरीर ही मान बैठती है। इस अज्ञान के कारण वह संसार के अच्छे-बुरे भोगों में फंस जाती है। कभी वह अच्छाई (सत) की ओर भागती है, कभी इच्छाओं (रज) में जलती है, तो कभी आलस्य (तम) में डूबती है। इन गुणों के प्रति जो उसका यह मोह है, वही उसे बार-बार मरने के बाद नए-नए शरीरों और योनियों में भटकने पर मजबूर करता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... संसार के भोगों और स्वभाव के गुणों से अत्यधिक मोह ही मनुष्य को जन्म-मरण के अंतहीन चक्र में बांधकर रखता है।

श्लोक संख्या: **13.23**

> उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः |
>
> परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन्पुरुषः परः || **23** ||

हिन्दी अनुवाद:
इस शरीर में स्थित यह आत्मा वास्तव में 'उपद्रष्टा' (पास रहकर सब कुछ देखने वाला), 'अनुमन्ता' (सहमति देने वाला), 'भर्ता' (पोषण करने वाला), 'भोक्ता' (अनुभव करने वाला), 'महेश्वरः' (महान ईश्वर) और 'परमात्मा' ऐसा कहा गया है।

सरल व्याख्या:
भगवान इस शरीर के भीतर बैठी आत्मा का असली स्वरूप उजागर करते हैं। वे कहते हैं कि भले ही जीव अज्ञान में भटके, पर उसके भीतर बैठा वह परम तत्व वास्तव में कोई कमज़ोर चीज नहीं है। वह 'उपद्रष्टा' है, जो बिना लिप्त हुए सब कुछ चुपचाप देख रहा है; वह 'अनुमन्ता' है, जो जीवन की हर क्रिया को होने की अनुमति देता है। वह इस पिंड का स्वामी (महेश्वर) है। वह साक्षात परमात्मा का ही अंश है जो इस देह में साक्षी रूप से विराजमान है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... हमारे भीतर की मूल चेतना कभी पापी या कमज़ोर नहीं होती, वह सदैव शुद्ध, साक्षी और परमात्मा का ही साक्षात रूप है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.24**

> य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह |
>
> सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते || **24** ||

हिन्दी अनुवाद:
जो मनुष्य इस प्रकार पुरुष (चेतन तत्व) को और गुणों सहित प्रकृति (जड़ तत्व) को तत्व से जान लेता है, वह सब प्रकार से कर्तव्य कर्म करता हुआ भी फिर जन्म को प्राप्त नहीं होता।

सरल व्याख्या:
जो व्यक्ति इस गहरे भेद को अनुभव से समझ लेता है कि "मैं अविनाशी आत्मा हूँ और यह शरीर तथा संसार बदलने वाली प्रकृति है", वह दुनिया की नजरों में चाहे गृहस्थी चला रहा हो, व्यापार कर रहा हो या कोई भी काम कर रहा हो (सर्वथा वर्तमानोऽपि), वह भीतर से पूरी तरह मुक्त रहता है। उसके कर्मों में स्वार्थ का बंधन नहीं होता, इसलिए मृत्यु के बाद उसे दोबारा इस दुःखरूपी संसार में नहीं आना पड़ता।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सच्चा आत्म-ज्ञान संसार को छोड़ने से नहीं, बल्कि संसार में रहते हुए भी भीतर से निर्लिप्त और जाग्रत रहने से सिद्ध होता है।

श्लोक संख्या: **13.25**

> ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना |
>
> अन्ये साङ्ख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे || **25** ||

हिन्दी अनुवाद:
उस परमात्मा को कितने ही मनुष्य तो शुद्ध हुई सूक्ष्म बुद्धि से 'ध्यान योग' द्वारा अपने हृदय में देखते हैं, अन्य कितने ही 'ज्ञान योग' (सांख्य) द्वारा और दूसरे कितने ही 'कर्म योग' द्वारा देखते हैं।

सरल व्याख्या:
भगवान यहाँ उदारतापूर्वक सत्य तक पहुँचने के अलग-अलग रास्ते बताते हैं। वे कहते हैं कि हर मनुष्य का स्वभाव एक जैसा नहीं होता। इसलिए, कुछ लोग शांत बैठकर अपने मन को एकाग्र करके 'ध्यान' के जरिए उस आत्मा को ढूंढ लेते हैं। कुछ लोग बुद्धि और विवेक का सहारा लेकर, सत्य-असत्य का विचार करके 'ज्ञान मार्ग' से वहाँ पहुँचते हैं। और कुछ लोग समाज में रहकर बिना किसी स्वार्थ के केवल कर्तव्य समझकर काम करते हुए 'कर्म योग' से उसी परम पद को पा लेते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा तक पहुँचने के मार्ग अनेक हैं—चाहे ध्यान हो, ज्ञान हो या निष्काम कर्म—सच्ची निष्ठा होने पर मंजिल एक ही मिलती है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.26**

> अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते |
>
> तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः || **26** ||

हिन्दी अनुवाद:
परन्तु इनसे दूसरे (अर्थात जो साधारण मनुष्य हैं) इस प्रकार न जानते हुए दूसरों से (तत्ववेत्ता महापुरुषों से) सुनकर ही उपासना करते हैं और वे सुनने के परायण हुए पुरुष भी मृत्यु रूप संसार को निश्चय ही पार कर जाते हैं।

सरल व्याख्या:
भगवान उन लोगों को बहुत बड़ा सहारा देते हैं जो न तो बड़े ज्ञानी हैं, न ध्यान लगा सकते हैं और न शास्त्रों के ज्ञाता हैं। वे कहते हैं कि जो सीधे-सरल लोग हैं, यदि वे सच्चे संतों या महापुरुषों के वचनों को पूरी श्रद्धा से 'सुनते' हैं और उन पर भरोसा करके उनके बताए रास्ते पर चलने की कोशिश करते हैं, तो केवल इस 'श्रवण' (सुनने की निष्ठा) मात्र से ही वे भी इस भयानक भवसागर को आसानी से पार कर जाते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... श्रेष्ठ पुरुषों के वचनों पर अडिग श्रद्धा रखना और उनके उपदेशों को जीवन में सुनना-मानना भी मनुष्य के उद्धार के लिए पर्याप्त है।

श्लोक संख्या: **13.27**

> यावत्सञ्जायते किञ्चित्सत्त्वं स्थावरजङ्गमम् |
>
> क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ || **27** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन! यावन्मात्र जो कुछ भी स्थावर (जड़) या जंगम (चेतन) प्राणी उत्पन्न होता है, वह सब क्षेत्र (शरीर) और क्षेत्रज्ञ (आत्मा) के संयोग से ही उत्पन्न होता है, ऐसा तू जान।

सरल व्याख्या:
इस संसार में जो कुछ भी पैदा होता दिखाई देता है—चाहे वह एक छोटा सा कीड़ा हो, चलता-फिरता मनुष्य हो या स्थिर खड़ा हुआ पहाड़ और पेड़ हो—वह सब वास्तव में दो चीजों के मिलने से बना है। एक है जड़ ढांचा (क्षेत्र) और दूसरी है उसके भीतर छिपी चेतना की चिंगारी (क्षेत्रज्ञ)। इन दोनों के जुड़ते ही जीवन प्रकट होता है, इनके अलग होते ही मृत्यु हो जाती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सृष्टि का हर जीवन जड़ प्रकृति और चेतन आत्मा के अनूठे मिलन का ही परिणाम है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.28**

> समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् |
>
> विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति || **28** ||

हिन्दी अनुवाद:
जो पुरुष नष्ट होते हुए संपूर्ण प्राणियों में परमेश्वर को समभाव से स्थित और अविनाशी देखता है, वही वास्तव में (सही) देखता है।

सरल व्याख्या:
यह दृष्टि बड़ी क्रांतिकारी है। हम आँखों से देखते हैं कि लोग बूढ़े हो रहे हैं, मर रहे हैं, बर्तनों की तरह शरीर टूट रहे हैं। लेकिन असली देखने वाला (ज्ञानी) वह है जो यह देख पाता है कि इन मरते हुए शरीरों के भीतर जो परमात्मा बैठा है, वह कभी नहीं मरता। वह घट-घट में एक जैसा, राजा में भी और रंक में भी, बराबर रूप से मौजूद है। जो इस अविनाशी तत्व को देख लेता है, भगवान कहते हैं कि केवल उसी की आँखें खुली हैं, बाकी सब अंधे हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... बाहरी तौर पर दिखने वाले विनाश और बदलाव के पीछे छिपे शाश्वत और अमर परमात्मा को पहचानना ही सच्ची दिव्य दृष्टि है।

श्लोक संख्या: **13.29**

> समं पश्यन्ही सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् |
>
> न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम् || **29** ||

हिन्दी अनुवाद:
क्योंकि जो मनुष्य सब जगह समान रूप से स्थित ईश्वर को देखता हुआ चलता है, वह अपने द्वारा अपने आप को नष्ट नहीं करता (अपने पतन का कारण नहीं बनता), इससे वह परम गति को प्राप्त होता है।

सरल व्याख्या:
जब मनुष्य को यह समझ आ जाता है कि जो ईश्वर मेरे भीतर है, वही सामने वाले के भीतर भी है, तो उसके मन से वैर-भाव, नफरत और ईर्ष्या हमेशा के लिए खत्म हो जाते हैं। वह किसी दूसरे को दुःख पहुँचाकर खुद अपनी आत्मा का नुकसान नहीं करता। ऐसी समता की सोच रखने वाला व्यक्ति अपने अंतःकरण को इतना शुद्ध कर लेता है कि वह सीधे परम कल्याण (मोक्ष) को प्राप्त होता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सब जीवों में एक ही आत्मा को देखना मनुष्य को पाप और स्वार्थ से बचाकर सीधे परम गति की ओर ले जाता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.30**

> प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानी सर्वशः |
>
> यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति || **30** ||

हिन्दी अनुवाद:
और जो पुरुष संपूर्ण कर्मों को सब प्रकार से 'प्रकृति' द्वारा ही किए जाते हुए देखता है और आत्मा को 'अकर्ता' (कुछ न करने वाला) देखता है, वही वास्तव में सही देखता है।

सरल व्याख्या:
संसार में जितने भी काम हो रहे हैं—साँस लेना, खाना खाना, सोचना, समाज के काम—वे सब शरीर, मन और इन्द्रियों के स्तर पर हो रहे हैं, जो कि प्रकृति का हिस्सा हैं। हमारी आत्मा इन सब कामों को केवल रोशनी देती है, वह खुद कोई हाथ-पैर नहीं चलाती, वह अकर्ता है। जो मनुष्य इस बात को समझकर कर्मों के अहंकार (कि "यह मैंने किया") से मुक्त हो जाता है, वही सत्य का वास्तविक दृष्टा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सारे कर्म प्रकृति के गुणों द्वारा होते हैं; आत्मा को उनका कर्ता न मानकर तटस्थ साक्षी बने रहना ही परम सत्य का दर्शन है।

श्लोक संख्या: **13.31**

> यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति |
>
> तत एव च विस्तारं ब्रह्म सम्पद्यते तदा || **31** ||

हिन्दी अनुवाद:
जिस क्षण यह मनुष्य संपूर्ण भूतों के अलग-अलग भावों को एक ही परमात्मा में स्थित देखता है तथा उस परमात्मा से ही संपूर्ण भूतों का विस्तार (पैदा होना) देखता है, उसी क्षण वह ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।

सरल व्याख्या:
जब हमारी सोच संकीर्णता से ऊपर उठती है, तब हमें समझ आता है कि संसार के सभी जीव, चाहे वे कितने भी अलग दिखाई दें, उनकी जड़ एक ही है। जैसे एक ही पेड़ से अनेक शाखाएँ, पत्तियाँ और फल निकलते हैं, वैसे ही एक ही अविनाशी परमात्मा से इस पूरे संसार का फैलाव हुआ है। जो इस एकता को देख लेता है, वह इसी जीवन में परम सत्य (ब्रह्म) का अनुभव कर लेता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... संसार की अनेकता में छिपी हुई एक परमात्मा की सत्ता को पहचान लेना ही मनुष्य को सीधे ब्रह्म-भाव में लीन कर देता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.32**

> अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः |
>
> शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते || **32** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे कुन्तीपुत्र! अनादि होने से और निर्गुण (गुणों से अतीत) होने से यह अविनाशी परमात्मा शरीर में स्थित होने पर भी वास्तव में न तो कुछ करता है और न ही (कर्मफलों से) लिप्त होता है।

सरल व्याख्या:
भगवान कहते हैं कि हमारे इस नाशवान शरीर के भीतर जो आत्मा बैठी है, वह परमात्मा का ही रूप है। चूँकि इसकी न तो कोई शुरुआत है (अनादि) और न ही इसमें संसार का कोई दोष या गुण है (निर्गुण), इसलिए शरीर के रहते हुए और शरीर द्वारा सारी क्रियाएँ होते हुए भी, आत्मा भीतर से बिल्कुल अछूती रहती है। वह न तो किसी पाप-पुण्य को करती है और न ही उसके बंधन में बंधती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... शरीर के सुख-दुःख और कर्म आत्मा को स्पर्श नहीं कर सकते; वह कमल के पत्ते की तरह संसार के कीचड़ में रहकर भी सदा पवित्र और मुक्त रहती है।

श्लोक संख्या: **13.33**

> यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते |
>
> सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते || **33** ||

हिन्दी अनुवाद:
जिस प्रकार सर्वत्र व्याप्त आकाश अत्यंत सूक्ष्म होने के कारण किसी वस्तु से लिप्त नहीं होता, उसी प्रकार शरीर में सब जगह स्थित होने पर भी आत्मा शरीर के गुणों या दोषों से लिप्त नहीं होती।

सरल व्याख्या:
भगवान यहाँ आकाश का बहुत सुंदर उदाहरण देते हैं। आकाश (space) हर जगह है—वह गंदगी के ऊपर भी है और सुगन्धित फूलों के ऊपर भी, लेकिन गंदगी आकाश को गंदा नहीं कर सकती। इसी तरह, आत्मा हमारे पूरे शरीर में, नस-नस में व्याप्त है, लेकिन शरीर के बीमार होने, बूढ़ा होने या मन के दुःखी होने से आत्मा पर कोई दाग नहीं लगता। वह अपनी सूक्ष्मता के कारण हमेशा शुद्ध बनी रहती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... आत्मा की प्रकृति आकाश जैसी निर्लिप्त है, जो शरीर के किसी भी भौतिक बदलाव या विकार से कभी प्रभावित नहीं होती।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **13.34**

> यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः |
>
> क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत || **34** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे भरतवंशी अर्जुन! जिस प्रकार एक ही सूर्य इस संपूर्ण ब्रह्मांड को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार एक ही क्षेत्री (आत्मा) इस संपूर्ण क्षेत्र (शरीर) को प्रकाशित करती है।

सरल व्याख्या:
जैसे आसमान में चमकने वाला अकेला सूरज पूरी दुनिया को रोशनी देता है; उसी सूरज की रोशनी में अच्छे काम भी होते हैं और बुरे भी, पर सूरज न तो अच्छा होता है न बुरा। ठीक इसी तरह, हमारे भीतर बैठी जो आत्मा है, वह इस पूरे शरीर, मन और बुद्धि को चेतना की रोशनी देती है। उसी की रोशनी से आँखें देखती हैं और पैर चलते हैं, पर वह स्वयं इन सब क्रियाओं से अलग केवल एक प्रकाशक है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... आत्मा शरीर रूपी अंधकार को जीवन देने वाली वह दिव्य रोशनी है, जो स्वयं कर्ता न होकर केवल संपूर्ण जीवन को ऊर्जा और चेतना प्रदान करती है।

श्लोक संख्या: **13.35**

> क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा |
>
> भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम् || **35** ||

हिन्दी अनुवाद:
इस प्रकार जो मनुष्य 'ज्ञान रूपी नेत्रों' द्वारा क्षेत्र (शरीर) और क्षेत्रज्ञ (आत्मा) के भेद को तथा प्रकृति से मुक्त होने के उपाय को तत्व से जानते हैं, वे परम पद को प्राप्त होते हैं।

सरल व्याख्या:
यह इस तेरहवें अध्याय का आखिरी श्लोक है। भगवान पूरे अध्याय का निचोड़ देते हुए कहते हैं कि जो लोग विवेक की आँख (ज्ञानचक्षु) खोलकर इस बात को साफ-साफ देख लेते हैं कि शरीर अलग है और आत्मा अलग, और यह भी जान जाते हैं कि इस जड़ प्रकृति के जाल से बाहर कैसे निकलना है, वे सीधे परमात्मा के उस परम धाम को पा लेते हैं जहाँ से फिर कभी गिरना नहीं होता।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... विवेक के द्वारा शरीर और आत्मा को अलग-अलग देख लेना ही संसार के सारे बंधनों को काटकर परम मुक्ति पाने का एकमात्र राजमार्ग है।

Satyaanubhuti Ashram

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगो नाम त्रयोदशोऽध्यायः

Satyaanubhuti Ashram